स्वावलम्बन

Swalamban

मानव बुद्धिशील प्राणी है। जिस विषय पर दूसरे प्राणी विचार नहीं कर सकते हैं, वह चिन्तन करता है। इसी कारण वह संसार के समस्त जीवधारियों में श्रेष्ठ माना जाता है। जहाँ एक ओर उसमें विद्या, बुद्धि, प्रेम आदि श्रेष्ठ गुण विद्यमान हैं, वहीं दूसरी तरफ वह राग, द्वेष, हिंसा आदि बुरी प्रवृत्तियों से भी ओत-प्रोत है। श्रेष्ठ तत्त्वों का अपने अन्दर विकास करने के लिए मानव को स्वावलम्बी बनना पड़ेगा। दूसरों का सहारा छोड़कर केवल अपने सहारे पर जीवन बिताना 'स्वावलम्बन' कहलाता है। अपने पैरों पर खड़ा होने वाला व्यक्ति न तो समाज में निरादर पाता है और न घृणा का पात्र ही होता है। वह अपने बल पर पूर्ण विश्वास प्राप्त करता है। वास्तव में स्वावलम्बन मानव का वह गुण है जो उसे आत्मविश्वासी बनाता है। जो व्यक्ति स्वयं कर्मठ एवं स्वावलम्बी नहीं है, ऐसे व्यक्ति की कोई भी सहायता नहीं करता है और ऐसे व्यक्ति का जीवन पशु से भी हेय होता है। आज के युग में जीवन उसी का सार्थक है जो स्वावलम्बी है; क्योंकि स्वावलम्बन जीवन का मूलमंत्र है।

जो लोग स्वावलम्बन को एक ढकोसला तथा सिद्धान्त मात्र मानते हैं, वह अपनी अल्प ज्ञान का परिचय देते हैं। जो व्यक्ति इस प्रकार का विपरीत तर्क करते हैं वे कुण्ठाओं से आवृत्त होते हैं। ऐसे लोग तर्क के आधार पर स्वावलम्बी जीवों को एकान्त में खड़े होने वाले अरण्य का वक्ष मानते हैं। ऐसा मानना उनकी भूल है। स्वावलम्बन चाहे व्यक्ति का हा या समाज का अथवा राष्ट्र का वह समान रूप से महत्त्व रखता है। दूसरे व्यक्ति का मुख देखने वाला मानव. दूसरे समाज पर आशा लगाने वाला समाज, किसी अन्य राष्ट्र पर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निर्भर रहने वाला राष्ट्र कभी भी उन्नति हा कर सकता क्यों कि उसे हर समय सहायता नहीं मिल सकती है और कार्य औरम्भ करन में दूसरे की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। कुछ कायर जन होते हैं जो बात-बात पर पुरानी रूढ़ियों को मानते हुए परावलम्बन का परिचय देते हैं। ऐसे ही कायर पुरुष भाग्यवाद चक्कर में पड़ते हैं। उन्हें कभी भी संतोष नहीं मिलता है। अतः प्रत्येक छोटे से छोटा कार्य हिम्मत के साथ स्वावलम्बनपूर्वक हमें स्वयंमेव कर लेना चाहिए इसमें पूर्ण संतोष प्राप्त होती है। स्वावलम्बन से अनेक लाभ हैं। जीवन का सच्चा सार स्वावलम्बन से ही प्राप्त होता है। स्वावलम्बन में

पुरुषार्थ और परिश्रम दोनों ही आ जाते हैं। जो मानव या म दसरो का सहयोग नहीं चाहता। भाग्य के नाम पर हाथ पर हाथ रखे नहीं बैठा रहता, वह सदैव उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता जाता है। स्वावलम्बी पुरुष विश्व पाहा सुख पाता है। वह मरते समय तक कार्य करता रहता है। उसका शरीर, मस्तिष्क और बुद्धि निकम्मे नहीं बनते । वह सदा स्वस्थ और सुखी रहता है। स्वावलम्बन से आत्म-गौरव बढ़ता है। अपना कार्य स्वयं करके एक विशेष आनन्द और गौरव का अनुभव होता है। कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए आत्म-गौरव परमावश्यक है। स्वावलम्बी पुरुष का सभी सम्मान करते हैं। वह कठिन से कठिन कार्य से भी जी नहीं चुराता। उसके हृदय में उत्साह और भुजाओं में बल होता है। वही देश और समाज का कल्याण कर सकता है। उसका शरीर भले ही अमर न हो सके; किन्तु उसका यश अनन्त काल के लिये अमर रहता है। दूसरे के आक्रमण करने पर वह स्वयं रणक्षेत्र में जाकर युद्ध करके देश का हित करता है।

विश्व के प्रायः सभी महापुरुष स्वावलम्बन के द्वारा ही महान् बने हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने वन में स्वावलम्बन बल पर ही सेना संगठित कर रावण पर विजय प्राप्त की। कंश का वध कृष्ण ने स्वावलम्बन के आधार पर ही किया। राजकुमार चन्द्रगुप्त की सहायता कोई न करता, यदि वह स्वावलम्बी न होता। स्वावलम्बी व्यक्ति स्वयमेव अपने भाग्य का विधाता होता है। नेपोलियन बड़ी निम्न स्थिति का व्यक्ति था; किंतु स्वावलम्बन से वह महान् विजेता बन गया। हजरत मुहम्मद, ईसामसीह आदि ऐसे ही पुरुष थे जो स्वावलम्बन के बल पर महान् व्यक्ति बन गए। गांधी, नेहरू एवं शास्त्री जी भी अपने स्वावलम्बन से ही विश्व में नाम कमा गये।

बच्चे की प्रथम पाठशाला घर है। अतः बचपन से ही माता-पिता अपने बच्चों को बात-बात पर स्वावलम्बन का पाठ पढ़ायें। अधिक से अधिक वस्तु बच्चे से स्वतः मंगाएँ, उसे स्वावलम्बी महापुरुषों की कहानियाँ सुनायें। शिक्षा केन्द्र भी इस ओर विशेष ध्यान दें; क्योंकि छोटे-छोटे बच्चों में जब अपना कार्य स्वयं करने की भावना भर जायेगी, तो वे स्वयं स्वावलम्बी बन जायेंगे। इसके लिए प्राचीन गुरुकुल प्रणाली बहुत उत्तम थी, जिसमें पुष्पवाटिका का सिंचन एवं खेती करने का भी विधान था। छात्र को प्रतिरक्षा की शिक्षा दी जाती थी। वह आजकल के अंग्रेजी पढ़े-लिखों के समान पानी के लिये दूसरे का मुख नहीं ताकता था, नौकरी के लिए वह बिल्कुल भी नहीं लालायित होता था। स्वावलम्बन 'स्वाधीनता'

का प्रतीक है। इसके विपरीत परावलम्बन पराधीनता का द्योतक है। इस पराधीनता में क्षण भर को भी सुख नहीं।

यदि जगत् में हम अपना नाम कमाना चाहते हैं और अपने देश को उन्नत देखना चाहते हैं, तो हमें स्वावलम्बन को अपनाना ही पड़ेगा। स्वावलम्बी व्यक्ति किसी के दाने-दाने को मुँहताज नहीं बनता है, वह अपने परिश्रम से पर्याप्त कमा लेता है और निरादर के धन को अति तुच्छ समझता है; क्योंकि उसे स्वावलम्बन के आगे कुबेर का कोष (खजाना) भी व्यर्थ है।